आरबीआई: 90 वर्ष की विरासत, विनियमन और आकांक्षाओं का सफ़र[1]

केंद्रीय बैंकों के गवर्नर और वरिष्ठ गणमान्य व्यक्ति, प्रतिष्ठित प्रतिभागी, देवियो और सज्जनो,

मुझे आप सबके बीच "सहयोग निर्माण" पर आयोजित इस उच्च-स्तरीय सम्मेलन में सहभागी होकर बहुत खुशी हो रही है। यह सम्मेलन इस ऐतिहासिक अवसर पर आयोजित किया गया है, जब हम अपनी स्थापना का 90वां वर्ष मना रहे हैं। यह सम्मेलन हमारी उस कोशिश का हिस्सा है, जिसके अंतर्गत हम 'वैश्विक दक्षिण' के केंद्रीय बैंकों के समक्ष आने वाले मुद्दों पर एक सार्थक चर्चा शुरू करना और सहयोग बढ़ाना चाहते हैं। आज मुझे आप सबके साथ अपने विचार साझा करने का अवसर मिला है - उन रास्तों के बारे में जो हमने अब तक निर्धारित किए हैं, और उन कुछ चुनौतियों के बारे में जिनका सामना हमें एक विनियामक के तौर पर भविष्य में करना पड़ सकता है।

2. इस वर्ष हमारी उस यात्रा के भी 75 वर्ष पूरे हो रहे हैं, जिसमें हमने बैंकिंग व्यवस्था के औपचारिक विनियामक और पर्यवेक्षक के तौर पर कार्य किया है। यह भूमिका हमें 1949 में 'बैंकिंग विनियमन अधिनियम' लागू होने के बाद मिली थी। पीछे मुड़कर देखें, तो विनियामक शक्तियों को औपचारिक रूप देने का कदम 1930 के दशक के मध्य और 1940 के दशक की शुरुआत में वाणिज्यिक बैंकों की बड़े पैमाने पर हुई असफलताओं के बाद उठाया गया था। उस समय बैंकिंग व्यवस्था को सुरक्षित रखने के लिए ऐसे कदम उठाना आवश्यक हो गया था। इस प्रकार, हमारा विनियामकीय दृष्टिकोण कुछ हद तक ऐतिहासिक घटनाओं से प्रभावित हुआ है और आकार ग्रहण किया है, जो भारत की विकास गाथा के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है।

अतीत का सफ़र[2]

3. जैसा कि आप जानते होंगे, आरबीआई भारत की उन संस्थाओं में से एक है, जो आज़ादी से पहले अस्तित्व में आया था और जिसने आज़ादी से पहले और बाद - दोनों ही दौर देखे हैं। अपने शुरुआती वर्षों में आरबीआई के मुख्य कार्य थे: करेंसी निर्गम विनियमित करना, मौद्रिक स्थिरता बनाए रखने के लिए आरक्षित राशियां (रिज़र्व) रखना, और देश के हित में ऋण और मुद्रा प्रणाली का संचालन करना।

4. भले ही आरबीआई करेंसी और रिज़र्व प्रबंधन से जुड़ी अपनी निर्धारित ज़िम्मेदारियों को पूरा करने में लगा हुआ था, लेकिन 1930 और 40 के दशक में, किसी ठोस विनियामक अधिकार क्षेत्र या सत्ता के अभाव में, बड़ी संख्या में बैंक असफल हुए थे।

1 श्री एम. राजेश्वर राव, उप गवर्नर द्वारा 22 नवंबर, 2024 को मुंबई, भारत में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अपने 90वें वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित “वैश्विक दक्षिण” में केंद्रीय बैंकों के उच्च-स्तरीय नीति सम्मेलन” में दिया गया उद्घाटन भाषण। खबीर अहमद और सौरभ प्रताप सिंह द्वारा दिए गए इनपुट के लिए हम उनके आभारी हैं।

2 आरबीआई इतिहास से इनपुट - घटनाओं का कालक्रम (लिंक)

मोटे अनुमानों के अनुसार, 1940[3] के दशक में भारत में 570 से ज़्यादा बैंक असफल हो गए थे। इस स्थिति में, भारतीय संसद ने बैंकों पर आरबीआई को विनियामक और पर्यवेक्षी शक्तियाँ देने के लिए बैंकिंग विनियमन अधिनियम ('बीआर अधिनियम'), 1949 बनाया। आरबीआई अधिनियम का कानूनी ढाँचा, बीआर अधिनियम के साथ मिलकर, भारतीय वित्तीय प्रणाली को एक मज़बूत संवैधानिक आधार प्रदान करता है। इसने आरबीआई को बैंकों को लाइसेंस देने और परिणामस्वरूप बैंकिंग क्षेत्र में संस्थाओं के अनचाहे रूप से बढ़ने पर नियंत्रण रखने का अधिकार भी दिया। इसलिए, बीआर अधिनियम को लागू करना भारतीय वित्तीय प्रणाली के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण मील के पत्थरों में से एक माना जा सकता है।

5. 1950 के दशक के दौरान, विनियामकीय फोकस बैंकों के एकीकरण पर बना रहा, जबकि 1960 का दशक संस्था निर्माण के प्रयासों को मज़बूत करने वाला रहा, खासकर वित्तीय क्षेत्र में। उदाहरण के लिए, 1960 में आरबीआई को बैंकिंग क्षेत्र को एकीकृत करने का अधिकार देने के लिए संवैधानिक संशोधन किए गए, जिसके परिणामस्वरूप अगले कुछ दशकों[4] में 200 से ज़्यादा बैंकों का पुनर्गठन और एकीकरण हुआ, और बार-बार बैंक असफल होने की घटनाएँ इतिहास बन गईं। विनियामकिय अधिकार क्षेत्र का दायरा बढ़ाते हुए, इस चरण के दौरान आरबीआई को गैर-बैंकिंग संस्थाओं की जमा स्वीकार करने वाली गतिविधियों और सहकारी बैंकिंग प्रणाली के संचालन को विनियमित करने के लिए और अधिक अधिकार दिए गए। इसी गति को आगे बढ़ाते हुए, 1969 (और बाद में 1980) में प्रमुख अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद के कुछ दशकों में, भारत में वित्त और वित्तीय संस्थाओं तक आम लोगों की पहुँच को बेहतर बनाने पर ध्यान केंद्रित किया गया। इसके लिए 'अग्रणी बैंक योजना' शुरू की गई, प्राथमिकता वाले क्षेत्रों को ऋण देने के लिए नियम बनाए गए, बैंकों की शाखाओं का विस्तार किया गया, और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का गठन किया गया, आदि।

6. इसी प्रगतिशील भावना के साथ, 1990 के दशक में कई ऐसे सुधार लाए गए, जिन्होंने आज के आधुनिक और मज़बूत वित्तीय क्षेत्र की नींव रखी। 1991 में उदारीकरण के सुधारों के बाद, इस क्षेत्र में दो बड़े बदलाव हुए। पहला, 1993 में विस्तृत दिशा-निर्देश जारी किए गए, जिनके अंतर्गत बैंकिंग क्षेत्र को निजी क्षेत्र के लिए खोल दिया गया; इसका उद्देश्य वित्तीय सेवाओं की डिलीवरी और उनकी कीमतों में कुशलता लाना था। और दूसरा, 1997 में एक महत्त्वपूर्ण कानूनी कदम उठाया गया, जिसने आरबीआई को एनबीएफसी (गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों) को विनियमित करने और उनके लिए विभिन्न विवेकपूर्ण मानक निर्धारित करने का अधिकार दिया।

3 अध्याय 12: संकट, एकीकरण और विकास, आरबीआई का इतिहास, खंड-II (1951-67) (लिंक)

4 आरबीआई का इतिहास - घटनाओं का कालक्रम: 1960 से 1971 (लिंक)

इन दोनों उपायों ने वित्तीय क्षेत्र को 21वीं सदी की आने वाली चुनौतियों और अवसरों का सामना करने के लिए तैयार होने का अवसर प्रदान किया।

7. पिछले एक दशक में भारत में अलग-अलग प्रकार की बैंकिंग का विकास हुआ है, जिसमें कई अनोखी श्रेणियों की संस्था, जैसे कि लघु वित्त बैंक और भुगतान बैंक, सामने आए हैं। बैंकिंग प्रणाली के विकास के साथ-साथ, बहुत ही सक्रिय गैर-बैंकिंग वित्तीय क्षेत्र और सहकारी बैंकिंग ने अर्थव्यवस्था में वित्तीय मध्यस्थता को मज़बूत किया है। उनके पैमाने के बारे में कुछ अंदाज़ा देने के लिए, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों और एनबीएफसी की संपत्ति 31 मार्च, 2024 तक क्रमशः लगभग ₹280 ट्रिलियन और ₹50 ट्रिलियन तक पहुँच गई है, और इन संस्थानों द्वारा दी गई बकाया ऋण सुविधा लगभग ₹205 ट्रिलियन[5] है।

8. वित्तीय संस्थाओं के इस व्यापक नेटवर्क ने हमारे देश में वित्तीय समावेशन की गुणवत्ता को बेहतर बनाने में भी सहायता की है, जो वित्तीय सेवाओं तक पहुँच, उपयोग और गुणवत्ता को मापने वाले वित्तीय समावेशन सूचकांक में लगातार वृद्धि से पता चलता है। एक और क्रांति जो हुई है, वह डिजिटल क्षेत्र में है। आज, डिजिटल भुगतान अवसंरचना एक वर्ष में 160 बिलियन से अधिक लेन-देन की सुविधा देता है, जिनका मूल्य ₹2400 ट्रिलियन से अधिक है (वित्तीय वर्ष 2023-24)। खुदरा डिजिटल लेन-देन का मूल्य ₹720 ट्रिलियन से अधिक है, जिसमें से लगभग ₹265 ट्रिलियन के लेन-देन अकेले स्वदेशी यूपीआई और आईएमपीएस के माध्यम से किए जा रहे हैं। ये आँकड़े हमें उस सफ़र की एक झलक देते हैं जो हमने अपेक्षाकृत मामूली शुरुआत से लेकर एक प्रकार के विश्व-अग्रणी बनने तक निर्धारित किया है, खासकर डिजिटलीकरण के क्षेत्र में।

9. आरबीआई ने सक्रिय रूप से ऐसे विनियामक नीतिगत उपाय अपनाए हैं जिनका उद्देश्य प्रमुख नीतिगत मानदंडों को अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप बनाना है, साथ ही उन्हें देश की ज़रूरतों के हिसाब से ढालना भी है। इसका उदाहरण शहरी सहकारी बैंकों के लिए बनाए गए सिद्धांत-आधारित / गतिविधि-आधारित नियमों का मिश्रण है, जहाँ विनियामक मानदंड सहकारी बैंकों के टियर-वार वर्गीकरण पर आधारित हैं; एनबीएफसी के लिए एक पैमाना-आधारित विनियामक ढाँचा लागू किया गया है ताकि उन्हें उनके संचालन के पैमाने और आपसी जुड़ाव की संभावना के अनुसार वर्गीकृत किया जा सके; और एमएफआई क्षेत्र के लिए भी मानदंड निर्धारित किए गए हैं।

10. हमारे नीति फ्रेमवर्क के हिस्से के तौर पर, हम विनियमन के लिए 'ट्विन-पीक अप्रोच' अपना रहे हैं, जिसमें विवेकपूर्ण और आचरण से जुड़े, दोनों प्रकार के मुद्दों को महत्व दिया जाता है।

5 पर्यवेक्षी रिटर्न, आरबीआई सीआईएमएस; अनुसूचित वाणिज्य बैंकों का खाद्य और गैर-खाद्य क्रेडिट (लिंक)

विवेकपूर्ण दृष्टिकोण से, बैंकों के लिए आवश्यक है कि उनके पास मज़बूत जोखिम प्रबंधन प्रक्रियाएँ हों, जिन्हें व्यापक क्रेडिट हामीदारी तरीकों का सहारा मिला हो।

संस्थाओं को मानकों का पालन करना होगा, खासकर पूंजी पर्याप्तता, क्रेडिट गुणवत्ता और चलनिधि जैसे मानकों का, ताकि उनकी वृद्धि में विवेकपूर्णता सुनिश्चित हो सके।

11. आचरण से जुड़े पहलुओं से जुड़ी चुनौतियाँ भी उतनी ही संवेदनशील हैं। जब प्रणाली ज़्यादा जटिल होता जाता है, तो वित्तीय उत्पाद और सेवाएँ भी उसी हिसाब से विकसित होती हैं। इसलिए, विनियमित संस्थाओं को अपेक्षाओं के एक मुश्किल दायरे को संभालना होता है, जिसका मतलब है तेज़ी से डिजिटलीकरण को बढ़ावा देना; मज़बूत साइबर सुरक्षा की बढ़ती ज़रूरत को पूरा करना; मज़बूत केवाईसी नियमों को सुनिश्चित करना; और सबसे आवश्यक बात, ग्राहक सेवा में उत्कृष्टता बनाए रखना।

12. इस संबंध में, आरबीआई ने हाल ही में हमारी विनियमित संस्थाओं के अभिशासन को बेहतर बनाने और आचरण से जुड़े मुद्दों को हल करने के लिए कुछ विनियामकिय उपाय किए हैं। अभिशासन के फ्रेमवर्क को मज़बूत करने के लिए, निष्पक्ष ऋण देने के तरीकों से जुड़े दिशानिर्देश, और बैंकों से जुड़े अभिशासन के मुद्दों पर दिशानिर्देश–जैसे कि बोर्ड की संरचना और कार्य, उत्तराधिकार योजना, और पारिश्रमिक–निर्धारित किए गए हैं। ऋण देने और ऋण शुल्क में पारदर्शिता को भी बढ़ावा दिया जा रहा है, जिसके लिए सभी आवश्यक फीस और शुल्कों का खुलासा करना अनिवार्य कर दिया गया है, ताकि उधार लेने वाले सूचित निर्णय ले सकें।

13. जब हम पीछे मुड़कर देखते हैं, तो हम पाते हैं कि अतीत में शुरू किए गए विनियामकिय विकास और नीति उपायों के कारण भारत में एक मज़बूत, लचीली और शक्तिशाली वित्तीय प्रणाली विकसित हुई है, जिसने कई संकटों का सामना किया है। लेकिन हमारे देश के लिए हमारे जो लक्ष्य हैं, उनके लिए आवश्यक है कि हम वित्तीय संस्थाओं के पैमाने और आकार में एक बड़ी छलांग लगाएँ। इससे संभवतः संस्थाओं और उनके उपयोगकर्ताओं को ज़्यादा जोखिम का सामना करना पड़ सकता है। इसे देखते हुए, मज़बूत अभिशासन और प्रभावी जोखिम प्रबंधन ही वे दो मुख्य आधार होंगे जो हमारी वित्तीय संस्थाओं को बचाए रखेंगे और उन्हें स्थायी रूप से बढ़ने में सहायता करेंगे। व्यापक दृष्टिकोण से देखें तो, वर्ष 2047 तक एक विकसित अर्थव्यवस्था बनने की हमारी राष्ट्रीय आकांक्षा के लिए, इस जटिल और तेज़ी से बदलते वित्तीय परिदृश्य में वित्तीय संस्थाओं की एक मज़बूत नींव की अभी भी आवश्यकता है। बैंकों के अलावा, मौजूदा संस्थाओं को अपनी बढ़ती संपत्ति बहियों को वित्तपोषित करने के लिए मज़बूत पूंजी बाज़ारों तक आसान पहुंच की आवश्यकता होगी; साथ ही, उन्हें ऐसे गहन वित्तीय बाज़ारों तक भी पहुंच चाहिए होगी जो उन्हें अपने तुलन पत्र पर मौजूद संबंधित जोखिमों से बचाव (हेज) करने में सक्षम बना सकें। इसके अलावा, बढ़ती ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए नए खिलाड़ियों, उत्पादों और सेवाओं (जैसे निजी ऋण) का भी प्रवेश

होगा। इसलिए, इन चुनौतियों का सामना करने और सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए एक सहायक विनियामक प्रणाली स्थापित करनी होगी।

भविष्य की परिकल्पना

14. हालही में भारत के वित्तीय क्षेत्र ने जिस प्रकार की वृद्धि और लचीलापन दिखाया है, उससे हमसे यह बहुत उम्मीदें बढ़ गई हैं कि हम इस गति को बनाए रखेंगे ताकि हमारी विकास संबंधी आकांक्षाएं पूरी हो सकें। यह उम्मीद तभी पूरी हो सकती है जब हमारे पास उभरती चुनौतियों का पहले से अनुमान लगाने की आवश्यक क्षमता हो, और साथ ही एक विनियामक के तौर पर उन पर प्रतिक्रिया देने की फूर्ति भी बनी रहे। इस संदर्भ में, मैं तीन ऐसे उभरते जोखिमों की ओर ध्यान दिलाना चाहूंगा जो न केवल भारत के लिए, बल्कि पूरी दुनिया–विशेषकर 'वैश्विक दक्षिण'–के लिए भी प्रासंगिक हैं।

(i) अत्यधिक मौसमी घटनाओं और जलवायु परिवर्तन से जुड़े जोखिम: बहुत समय पहले की बात नहीं है, जब जलवायु से जुड़े जोखिमों पर चर्चा महज़ एक बौद्धिक विमर्श तक ही सीमित थी। लेकिन अब हालात बदल चुके हैं! मौसम की अत्यधिक स्थितियां, गर्मियों का लंबा खिंचना और अनियमित मानसून–इन सबने नीति निर्माताओं को अपने रुख पर पुनर्विचार करने के लिए विवश कर दिया है। आज, हर अंतरराष्ट्रीय मंच पर जलवायु से जुड़े जोखिमों–चाहे वे भौतिक हों या संक्रमणकालीन–पर विस्तार से चर्चा होती है और उनके संभावित समाधानों पर विचार-विमर्श किया जाता है। इसके साथ ही, 'अनुकूलन जोखिमों' की ओर भी ध्यान दिलाया जा रहा है। एक नीति निर्माता के तौर पर, जलवायु से जुड़े जोखिमों और वास्तविक अर्थव्यवस्था तथा वित्तीय क्षेत्र पर उनके प्रभाव का सटीक आकलन करना अब भी एक बड़ी चुनौती बना हुआ है। वास्तविक क्षेत्र की संस्थाओं को भौतिक, संक्रमणकालीन और अनुकूलन जोखिमों से निपटने के लिए संसाधन उपलब्ध कराने की मांग का अर्थ यह हो सकता है कि हमें नई संस्थाओं, संसाधनों की नई श्रेणियों और मौजूदा संस्थाओं के भीतर नए व्यावसायिक मॉडलों की आवश्यकता पड़े। ये सभी बातें विनियामकों के लिए एक नई चुनौती बनकर सामने आएंगी।

(ii) उभरती प्रौद्योगिकी से जुड़े जोखिम: दुनिया में अब तक जो सबसे बड़ा और आमूलचूल बदलाव आया है, वह है प्रौद्योगिकी का बढ़ता उपयोग। इसने निस्संदेह हमारे जीवन को ऐसे अभूतपूर्व तरीकों से आसान बना दिया है, जिसकी हमने कभी कल्पना भी नहीं की थी; लेकिन साथ ही इसने एक ऐसे संपूर्ण पारिस्थितिकी तंत्र के विकास को भी जन्म दिया है, जो इसी विशाल पहुंच के सहारे फलता-फूलता है। ब्लॉकचेन और एआई/एमएल जैसी तकनीकों पर आधारित नई प्रक्रियाओं का आगमन; 'टोकेनाइज्ड एसेट्स' जैसे नए उत्पादों का उदय; और 'बिगटेक' व 'फिनटेक' जैसी नई संस्थाओं का उदय–इन सभी ने नीति निर्माताओं को हर पल सतर्क और तत्पर रहने के लिए विवश कर दिया है। हम ऐसी प्रगतिशील कार्यप्रणालियों की राह में कोई रुकावट नहीं डालना चाहते, लेकिन हमें 'प्रणालीगत स्थिरता' सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त सुरक्षा-घेरे अवश्य उपलब्ध कराने होंगे। अतः, नवाचार और विवेकपूर्णता के बीच

एक सही संतुलन स्थापित करने की यह कवायद, आने वाले समय में एक बड़ी चुनौती साबित होने वाली है।

(iii) गैर-बैंकिंग क्षेत्र में लचीलापन: भारतीय वित्तीय प्रणाली में एनबीएफसी के बढ़ते महत्व, आकार और पैमाने को देखते हुए, हम उनके लिए विनियामकीय दृष्टिकोण में सामंजस्य बिठाने की कोशिश कर रहे हैं ताकि किसी भी संभावित अंतरपणन से बचा जा सके। हालाँकि, भारत में गैर-बैंकिंग क्षेत्र में केवल एनबीएफसी ही नहीं, बल्कि और भी कई विविध संस्थाएँ शामिल हैं। और, वित्तीय प्रणाली की जटिलता को देखते हुए, ऐसी सभी संस्थाओं के बीच आपसी जुड़ाव और भी गहरा होता जाएगा। वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए वित्तीय क्षेत्र के विनियामकों के बीच घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

15. दुनिया में ऐसे बहुत कम केंद्रीय बैंक हैं जिनका जनादेश आरबीआई जितना व्यापक हो। हम एक पूर्ण-सेवा केंद्रीय बैंक हैं जिसका जनादेश मौद्रिक नीति, मुद्रा प्रबंधन, विनियमन और पर्यवेक्षण, भुगतान प्रणाली, वित्तीय समावेशन, विदेशी मुद्रा भंडार के प्रबंधन आदि जैसे कार्यात्मक क्षेत्रों तक फैला हुआ है। मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि इस विशाल ज़िम्मेदारी के बावजूद, आरबीआई के अस्तित्व के नौ गौरवशाली दशकों और एक विनियामक तथा पर्यवेक्षक के रूप में हमारे 75 वर्षों के अनुभव ने एक मज़बूत वित्तीय क्षेत्र की नींव रखी है, जो देश को उसकी विकासात्मक आकांक्षाओं को पूरा करने में सहायता कर सकता है।

अब मैं अपने विचार साझा करने का यह अवसर देने के लिए आयोजन टीम को, और आप सभी को धैर्यपूर्वक सुनने के लिए धन्यवाद देते हुए अपनी बात समाप्त करता हूँ।